अन्तस्

विमल लाठ

'अन्तस्' एक विशिष्ट काव्य-कृति है। विविध रंगों की कविताएँ इस काव्य-कृति में अन्तस् से निकलती अनुभूतियों के रूप में झलकती हैं। राष्ट्रीय चेतना के स्वर मुखर हैं। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की कामना इन कविताओं में प्रतिध्वनित होती है। बच्चों के आनन्द के स्वर इनमें मिलेंगे। देश की गरीबी से उपजे विषाद से भी आप रूबरू होंगे। कविताओं में अपने समय और समाज का प्रभावी अंकन है। हमें विश्वास है कि ये काव्यात्मक अभिव्यक्तियाँ पाठकों को तुष्टि प्रदान करेंगी।

अन्तस्

काव्य - कृति

विमल लाठ

श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय
कोलकाता

• मूल्य : रू. 120/-

• प्रथम संस्करण : रामनवमी, संवत् 2067
24 मार्च, 2010

• प्रकाशक : श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय
1-सी, मदन मोहन बर्मन स्ट्रीट (1 तल्ला)
कोलकाता - 700 007
टेलिफैक्स : ०३३ २२६८-८२१५

• मुद्रक : सी डी सी प्रिन्टर्स प्रा. लि.
45, राधानाथ चौधरी रोड
टेंगरा इण्डस्ट्रीयल इस्टेट
कोलकाता - 700 015

सर्वाधिकार सुरक्षित © विमल लाठ / Bimal Lath
5 एच, शुभम् अपार्टमेन्ट, 19बी, अलीपुर रोड, कोलकाता - 700 027
मोबाइल : 9433507962

नई पौध को बहुत स्नेह के साथ

इस विश्वास के साथ कि भारतमाता की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को वे बचाये रखेंगे और आगे भी बढायेंगे -

आद्या, उन्नत, अधिराज प्रताप, अद्वैत प्रताप, शिवाली, व्योम, पुनीत, अपराजिता, अवन्ति, पूजित, नव्या, अनुष्का, अवनि, अदिति, हर्षिता, स्पर्श, विदुला, योग्या, उद्यमा और श्रेष्ठा

के लिए

आमुख

विशिष्ट मंच संचालक तथा प्रभावी वक्ता के रूप में विमल जी की ख्याति है। कोलकाता की विविध साहित्यिक - सामाजिक - सांस्कृतिक गतिविधियों में उनकी अग्रणी भूमिका रहती है। नाटक के क्षेत्र में उनकी कीर्ति देशव्यापी है तथा वे प्रतिष्ठित सम्मानों से समादृत भी हो चुके हैं। लेकिन उनके कवि-रूप से कम लोग ही परिचित रहे हैं। यदा-कदा अंतरंग बैठकों या गोष्ठियों में या कभी-कभार कार्यक्रम संचालन के बीच वे अपनी कविताएँ भले ही उद्धृत करते हों लेकिन कवि के रूप में कविताओं का पाठ करते उन्हें अधिक नहीं सुना गया है, कई बार उन्होंने इसके लिए मना भी किया है।

विमल जी 'कुमारसभा पुस्तकालय' के अभिन्न अंग हैं। इसी आत्मीयता के कारण मैंने कई बार उनसे निवेदन किया था कि वे अपनी कविताओं को प्रकाशित करावें। पुस्तकालय के मार्गदर्शक श्री जुगल किशोर जेथलिया ने मेरी बात का समर्थन करते हुए कई बार उनसे आग्रह भी किया लेकिन तात्कालिक दबावों के कारण या संकोचवश विमल जी उसे टालते रहे। प्रसन्नता की बात है कि सुव्यवस्थित रूप से अपनी पांडुलिपि तैयार कर उन्होंने पुस्तकालय को प्रकाशनार्थ दी है और अब वह काव्य-कृति 'अन्तस्' के नाम से समारोहपूर्वक लोकार्पित होने भी जा रही है।

मेरा दृढ़ विश्वास है कि विमल जी ने सार्वजनिक क्षेत्र में अपनी सम्मोहक वाणी के कारण जो कीर्ति अर्जित की है, उसकी पीठिका में कहीं न कहीं उनका कवि-मानस है। वरिष्ठ एवं विशिष्ट कवियों की

श्रेष्ठ रचनाओं को काटकर रखने और उन्हें सुनाने का संस्कार तो उनका बचपन से ही रहा है। कवियों की विशिष्ट रचनाओं ने भी प्रेरणा प्रदानकर उनके कवि-व्यक्तित्व को परिपुष्ट किया है। श्रेष्ठ कवियों, लेखकों, नाटककारों, चिंतकों एवं दार्शनिकों का स्नेह-सद्भाव उन्हें प्राप्त रहा है। महाप्राण निराला, महादेवी, अज्ञेय, बच्चन और नरेश मेहता प्रभृति को उन्होंने करीब से सुना है। सर्वश्री धर्मवीर भारती, जगदीश गुप्त, भवानी प्रसाद मिश्र, मोहन राकेश, लक्ष्मीनारायण लाल, शरद जोशी, सूर्यभानु गुप्त, नरेन्द्र कोहली, गोविन्द मिश्र आदि के साथ उनका निकट का संबंध रहा है। इनके अतिरिक्त साहित्यमनीषी आचार्य विष्णुकांत शास्त्री ने उन्हें अपने अनुज जैसा स्नेह दिया है। इन्हीं साहित्यिक संस्कारों से पनपी ये कविताएँ अपने समय और समाज का प्रभावी अंकन कर अपनी छाप छोड़ती हैं।

हमें विश्वास है कि विविध रंगों की ये काव्यात्मक अभिव्यक्तियाँ पाठकों को तुष्टि प्रदान करेंगी। सी. डी. सी. प्रिन्टर्स के श्री चित्तरंजन चौधरी तथा श्री अनुप प्रसाद के मुद्रण में सम्पूर्ण सहयोग के लिये आभार।

रामनवमी
चैत्र शुक्ल ९, संवत् २०६७
दि. २४ मार्च २०१०
कोलकाता

डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी
अध्यक्ष
श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय

ये निश्छल कविताएँ

कविता को परिभाषित करते हुए नई कविता के प्रसिद्ध कवि धूमिल ने कभी कहा था –

कविता क्या है?
क्या यह व्यक्तित्व बनाने की
चरित्र चमकाने की
खाने - कमाने की कोई चीज़ है?
ना भाई ना, कविता
भाषा में
आदमी होने की तमीज़ है।

भाषा में आदमी होने की तमीज़ अर्थात् शब्द के माध्यम से संवेदना के जगत् में उदात्त माननीय आदर्शों को प्रतिष्ठित करने की चेष्टा, अशिव का प्रतीकार और सत्यं - शिवं - सुन्दरम् का मांगलिक उच्चार। बहुआयामी सांस्कृतिक, साहित्यिक संचेतना के स्वस्तिकलश विमल लाठ जी की कविताएं पढ़ते समय कविवर धूमिल की उपर्युक्त पंक्तियाँ अनायास चित्र में दीप्त हो उठती हैं और विमल जी की अभिव्यञ्जनाओं में जैसे उन्हें अपनी आलोकमयी व्याख्या प्राप्त हो जाती है। स्वयं विमल जी की दृष्टि में -

कविता अनुशासन है
अन्तस् की गहराई है
बिस्मिल्ला की शहनाई है।

इन तीन पंक्तियों में कविता के विलक्षण व्यक्तित्व की बड़ी ही कलात्मक व्यञ्जना है, कविता बौद्धिक विमर्श नहीं, शब्दों का सुसंयोजन मात्र नहीं, कला का प्रदर्शन नहीं अपितु एक अनुशासन है। यह बाह्य शासन नहीं आन्तरिक अनुशासन है जो कवि की वाणी को आभादीप्त करता है। बौद्धिक विमर्शों की ऊँचाई से नहीं, आन्तरिक भावों की गहराई से कोई कविता अपने मानविन्दु तक पहुँचती है, इसमें बौद्धिकता भी अपने चाकचिक्य से चौंकाने के लिये नहीं अपितु आन्तरिक रागात्मकता और जागृति का मन्त्र बनकर जड़ता से जगाने के लिये स्वयं को शब्दों में अनुगुम्फित और अनुगुञ्जित करती है। कविता भारतीय स्वर साधना के प्रतीक पुरुष बिस्मिल्ला की वह शहनाई है जो सुबहे बनारस की अनेकानेक छटाओं को स्वयं में समाहित किये है – प्रभात का राग, पुष्पों का पराग, अन्तस् का अनुराग उसकी श्वास-प्रश्वास में पिरोये हुए ऊर्जा के अक्षर हैं।

ऐसी ही कविता के कवि हैं विमल लाठ। सुगन्ध - धूप - हवा - हरी - भरी फुलवारी और प्यारी-सी किलकारी जैसे बच्चे जो हर घर में वसन्त बनकर छा जाते हैं जब कभी वक्त के विष-दंशों को सहते हैं, कवि मूर्तिमन्त अवसाद बन जाता है और उसके लिये संसार के सारे रंग बेमानी हो जाते हैं। एक अनिर्वचनीय पीड़ा उसे अपनी परिधि में समाहित कर लेती है, वह कह उठता है –

बच्चों का रोना सहा नहीं जाता
देश कितना भूखा है
कहा नहीं जाता।

औपचारिकताओं को जीनेवाली पाश्चात्य संस्कृति के खोखलेपन पर कवि की एक व्यंग्य टिप्पणी पठनीय भी है, मननीय भी। आज हम भूलते जा रहे हैं कि वास्तविक संवेगों से शून्य रटे-रटाये व्यवहार शब्द हमारे सुपठित होने का बोध तो करा सकते हैं, हमें किसी का सुहृद नहीं बना सकते –

अंग्रेजी के तीन शब्द महान् हैं
ये जब आपस में मिल जाते हैं
क़हर ढाते हैं।
बड़े से बड़ा अपराध कर
कान और आँख भींच
'आई एम सॉरी' के गंगाजल में
लगा दो हलकी-सी डुबकी
शान्तम् पापम् !

इसी तरह उसे महसूस होता है कि हमने अपने देश और परिवेश की समस्याओं को गम्भीरता से नहीं लिया, बस उन्हें हल्के-फुल्के ढंग से निबटाते रहे, उनसे वस्तुतः टकराये नहीं, मात्र कतराये। हमारी इसी अन्यमनस्कता ने राजधानियों में बैठे राजनीति के सफेदपोश दस्युओं को इतनी सामर्थ्य दे दी कि वे निश्चिन्त होकर प्रेमचन्द के अमर पात्र होरी और धनिया जैसे अन्य ग्रामीणों को लगातार लूटते रहे और आदर्श को अँगूठा दिखाते रहे। इसीलिये कवि बड़ी ही शिद्दत से महसूस करता है –

जब भी हँसता हूँ, लगता है
कुछ ग़लत हो गया,
कितना कुछ करना था
समय खो गया।

उसे बेहद कोफ़्त होती है उन तथाकथित साहित्यकारों को देखकर जिनके लिये कविता एक सामाजिक सरोकार नहीं मात्र एक लाभप्रद कारोबार है। वे किसी भी माँग के अनुरूप प्रदत्त समयावधि में कविता लिखकर प्रस्तुत कर देते हैं और कवि तब आपादमस्तक एक विक्षुब्ध प्रश्नचिह्न बन जाता है –

कविता कोई कैसे
कहने से लिखता है?

यह ऐसा सुर्ख पेड़ है
जो भीतर से उगता है
अपनी ज़मीन चुनता है
अन्दर-अन्दर चुरता है, गलता है
जड़ों में फैलता है
तब कहीं बाहर दिखता है। ....

कविता वह स्रोत है
जो पहाड़ को फोड़
बंजर ज़मीन में

पत्थर के बीच
सहसा निर्मल निर्झर बन
फूट पड़ता है

नहीं तो लाख सींचो
मिट्टी गोड़ो माथा फोड़ो
फिर भी रीता का रीता है

फ़रमाइशी कविता
कोई कैसे लिख सकता है?

विमल लाठ एक ऐसे रचनाकार हैं जो किसी बाहरी प्रभाव के कारण नहीं आन्तरिक दबाव के कारण लेखनी उठाते हैं और कविवर भवानी प्रसाद मिश्र की इन आप्त सूक्तियों को प्रामाण्य देते हैं -

क़लम अपनी साध
और मन की बात
बिल्कुल ठीक
कह एकाध।

ये कि तेरी भर न हो तो कह
और बहते बने सादे ढंग से
तो बह .....

जिस तरह हम बोलते हैं
उस तरह तू लिख
और इसके बाद भी
हमसे बड़ा तू दिख।

हमारी तरह बोलकर भी हमसे बड़े दिखनेवाले विमल लाठ जी की कविताओं का प्रकाशन एक स्वागत-योग्य समाचार है।

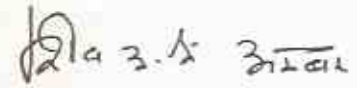

(डॉ. शिव ओम अम्बर)

४/१० नुनहाई, फ़र्रुख़ाबाद
उत्तर प्रदेश

निवेदन

इतना-सा जानता हूँ कि कविता में मुझे रस मिलता रहा है। श्रेष्ठ और वरिष्ठ कवियों की कविताओं ने मुझे आंदोलित किया है, कई बार झकझोरा है तो कई बार जीवन जीने का पाथेय दिया है। कई छोटी-छोटी कविताओं ने इतना संवेदन दिया है जो मोटी-मोटी पुस्तकें भी न दे सकीं। इसलिए नाटकों के साथ-साथ कविता-मंचन, काव्य-यामिनियों, कहानी-मंचन और सांगीतिक प्रयोगों में भी खूब रस मिला। आदरणीय स्वर्गीय आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री के साथ तो लगता था कि कविता में ही बातें हो रही हैं। 'अनामिका' की कई नाट्य-यात्राओं में जमकर कविता की अखाड़ेबाजी होती थी। अब वे केवल स्मरण-भर रह गई हैं।

हिन्दी में काव्य आवृत्तियों की कोई परम्परा नहीं दिखाई देती, न ही इसके लिए प्रशिक्षण की कोई व्यवस्था है जैसी बांग्ला में है। इसलिए अच्छी से अच्छी कविताओं को भी बड़े भदेस रूप में पढ़ा जाता है और इस कारण रस निष्पत्ति नहीं होती। स्कूल-कॉलेज के स्तर पर काव्य - आवृत्ति की व्यवस्था होनी चाहिए।

समय-समय पर मन में विचारों का उठना सभी के साथ होता है, स्वाभाविक है, मेरे साथ भी हुआ। कभी कोई परिस्थिति ऐसी बनी या किसी भाव का ऐसा सृजन हुआ जिसने मेरे अन्तस् को मथ दिया, तो उसे शब्द मिल गये। अधिकतर रात के समय, जब सब कुछ शान्त हो जाता है, ये विचार दृश्य के रूप में सामने आ खड़े होते हैं। पर कोई जरूरी नहीं कि रात के समय ही ऐसा होता हो। भयंकर भूकम्प आया था गुजरात में, बहुत से निरीह लोग मारे गये थे। उसी दिन

या शायद दूसरे दिन मेरे एक निकट संबंधी के यहाँ विवाह का समारोह था। शाम का समय। वही खाना-पीना, वही शानो शौकत। मेरा दम जैसे घुटने लगा और मैं क्षमा माँगकर घर आ गया। कुछ ही पलों में 'त्राहि माम्, हे धरित्री त्राहि माम्' मेरे हाथों में थी। एक दिन भूगोलवाला 'ग्लोब' सामने था, 'मैं, मैं और मैं' मानों मेरे सामने खड़ी थी। वनवासियों के गाँवों में देश की गरीबी मुँह से बोल रही थी। बच्चों ने जीवन में आनंद दिया, शब्दों ने उनका ऋण चुकाने का प्रयत्न किया। स्व. नरेश मेहता ने तो कहा है कि 'शब्दों पर जाकर मत खड़े हो / शब्दों का उल्लंघन ही कविता है।' इसलिए कई बार शब्दों का उल्लंघन भी हुआ है।

जो कुछ भी है, उसे प्रकाशित करने का साहस या दुस्साहस 'श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय' कर रही है। मेरे अग्रजतुल्य श्री जुगल किशोर जेथलिया और अंतरंग डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी के आदेश को मानकर यह रचना प्रकाशित हो रही है, उनका मैं कृतज्ञ हूँ। 'हर पुरस्कार पा लिया होता / गर ज़रा सर झुका लिया होता' पंक्तियों के यशस्वी कवि तथा जिनके पल - पल का बहुत बड़ा मूल्य है, डॉ. शिव ओम अम्बर की स्नेहछाया मुझ पर हमेशा ही बहुत गहरी रही है, उन्होंने भूमिका लिखकर इसे और गहरी बना दिया है, उनके लिए आभार शब्द छोटा पड़ता है।

विमल लाठ

रामनवमी
चैत्र शुक्ल ९, संवत् २०६७
२४ मार्च, २०१०
कोलकाता

क्रम

1.	बच्चों की बातें बड़ों के लिये	17
2.	पेड़	19
3.	कपड़े	20
4.	अन्तस्	21
5.	प्रतिष्ठा	23
6.	नन्हें मुन्नो ! सपना देखो	25
7.	सीपियां	27
8.	शहर और संवेदना	28
9.	बात बात में	30
10.	फरमाइशी कविता	32
11.	मेरे शहर की पीड़ा	35
12.	ब्लडग्रुप	36
13.	हँसी और विकास	40
14.	शान्तम् पापम्	41
15.	अंग्रेजी और मैकाले	42
16.	जब	43
17.	बुलंदी	47
18.	आपातस्थिति का अंकगणित	49
19.	वीर रस का कवि सम्मेलन और आपातस्थिति	50

20. मुक्त मुक्तक 52
21. नाटक 54
22. समाचारों का कोलाज 55
23. फिर से बनी अयोध्या योद्धा के विदूषक 59
24. तीर्थाटन : एक वायवी सत्य 62
25. शिल्पी 74
26. महाप्राण : शब्दों से परे 77
27. केसरी 79
28. त्राहि माम्, हे धरित्री, त्राहि माम् ! 80
29. आतंक 82
30. मनु का पुनर्जन्म 84
31. गंगा का अर्घ्य सिन्धु को 86
32. सिन्धु, ए देशेर प्राण 87
33. फौजी बहन ! 89
34. रामसेतु तोड़ने नहीं देंगे 92
35. सन् १८५७ से १९४७ और नई पीढ़ी 94

बच्चों की बातें बड़ों के लिये

बच्चे सुगन्ध हैं, हवा हैं, धूप हैं
हरी-भरी फुलवारी हैं
प्यारी सी किलकारी हैं।

बच्चों के घर में वसंत ही वसंत है
रंग है, फाग है, खुशबू की ठाट है
फूल-फूल पर भौरों की हाट है।

बच्चों का मन है, शीशा है
दिखता है आर-पार, खिलौना है
कुलाचें भरता प्यारा मृगछौना है।

बच्चों का प्यार अनुपम है, विशाल है
तुतली बोली, हंसी और मुस्कान
कवि के पास क्या कोई मिसाल है।

बच्चों की ममता में दिन छोटा पड़ता है
रातें लम्बी हों तो भी सहना पड़ता है
बच्चे तो बस बच्चे हैं कहना पड़ता है।

'बच्चों के खातिर ज़िंदगी जी है'
बच्चों जैसी बात है, बड़ों ने की है
जीवन की मदिरा छक कर पी है।

बच्चों का भविष्य आज का सवाल है
गर्भ से शुरू होता विधि का विधान है
कल पर टाला तो बस भगवान है।

बच्चों का रोना सहा नहीं जाता
देश कितना भूखा है
कहा नहीं जाता।

बच्चों की खातिर जब कुर्बान हैं हम
कितने ऐसे हैं जिनके पेट, पीठ से सटे हैं
उनके लिये क्या हैवान हैं हम?

बच्चों के लिये दर्द जब जगा है
मन क्यों रंगरेलियों में पगा है
वो भी कोई अपना सगा है।

पेड़

ऐसा एक पेड़ मेरे आँगन में उग आवे
हे ईश्वर ! हर मौसम के फल उसमें आवें
गर्मी में आम, बरसात में जामुन, जाड़े में संतरे
पास-पड़ोस के बच्चे भी उस पर झूम-झूम जावें ।

खुद खायें, औरों को खिलावें, तृप्ति पावें
टोकरे भर-भर घर मोहल्ले में ले जावें
ऐसा सुशासन दे प्रभु मेरे भारत को
लोग टोकरे भर-भर सुख घर ले जावें ।

ऋषि मुनियों का संकल्प 'सर्वे भवन्तु सुखिनः'
सब गायें, सब दोहरायें, तेरे सम्मुख झोली फैलायें
शिक्षा ऐसी जो फिर से विश्वगुरु बना दे
स्वास्थ्य ऐसा जो देवता भी ललचायें ।

कपड़े

सुबह सुबह
रस्सियों पर झूले
खपरैलों पर फैले
रंग बिरंगे कपड़े
हरे नीले भूरे लाल पीले
कल की कहानी कहते हैं
अमल विमल कमल के
जीवन का एक और दिन बीत गया।
आज वे कपड़े बदलेंगे
नीले की जगह हरा
पीले की जगह भूरा
कल ये फिर झूलेंगे
खपरैलों पर फैलेंगे
आज का दिन फिर बीतेगा
क्या कल जैसा ही होगा?
या कुछ अलग-सा होगा?
वे जैसे आज सुबह उठे हैं
सोयेंगे तब वैसे ही होंगे?
या कुछ बढ़के सोयेंगे?
कुछ होके सोयेंगे?
कपड़े तो कल सुबह फिर धुलेंगे
रस्सी पर खपरैलों पर फैलेंगे।

अन्तस्

कविता अनुशासन है
अन्तस् की गहराई है
बिस्मिल्ला की शहनाई है।

कविता बड़े मुँह से छोटी सी बात है
नहीं देखती जो दिन और रात है
लोग कहते वाह क्या बात है।

अभिमान किसका
तन का या धन का
चाव खोखले मन का।

मैं, मैं और मैं
कितना बड़ा भूगोल है
अन्दर सब पोल है।

अच्छी बातें करनी हैं कल
आज नहीं एक भी पल
मौत का क्या, जायेगी टल।

अंग्रेजी में ही रोना है, गाना है
अंग्रेजी ओढ़ना है, बिछौना है
सदियों का बोझ है, ढोना है।

जीवन जीने का ठाट फर्श में जड़े कुछ पत्थर
सजावट के सामान, नौकर-चाकरों के फड़के
कहाँ है समय, जिसमें देश का दिल धड़के।

बच्चों के लिए दीया जलाते थे कभी उम्र की दुआ के लिए
मोमबत्तियां बुझाते हैं वही, साहबी चश्मा पहने हुए
अँधेरे उजाले का फर्क गया, क्या कहें हम इनके लिए।

प्रतिष्ठा

मुझे प्रतिष्ठा तुम दोगे
आज दोगे कल ले लोगे
फिर?

शॉल, चेक और प्रशस्ति पत्र
मुझे भूखे पेट मुस्काना होगा
तुम्हारे साथ
फोटो खिंचवाना होगा
मंच से उतर आना होगा
फिर?

कलफ लगा कुर्ता मुझे चुभेगा
तब भी तो पहनना होगा
मेरे फटे गंजी को हटा देना होगा
जो मेरे आराम का मामला है
ये अंदर की बात है, बताता हूं
रोज-रोज कलफ लगा कुर्ता
कहाँ से लाऊँगा
धोबी का भारी बिल कहाँ से चुकाऊंगा
फिर?

आज मुझे अपनी गाड़ी से घर भिजवाओगे
सड़क पार कर रहे मुझसे
मर्सीडीज़ में बैठे तुम
कल आँखें चुराओगे
दौड़ कर बस पकड़ते
मेरा फिसल जाना नहीं देख पाओगे
फिर?

ना बाबा ना
प्रतिष्ठा अपनी गाढ़ी कमाई है
उमर भर दिनों-दिन मशक्कत
रातों की नींद गँवाई है
तब कहीं मुझ गरीब को रास आई है।
एक दिन का राजा बन जाऊँ
अपना परचम हवा में लहराऊँ
न मुझे चाह है, न मेरे बच्चों की जरूरत है
तुमने पूछा इज्जत बख्शी, यही क्या कम है।

मांगता था आज तक दुआ अपने लिए
कल से मांगूगा तुम्हारे भी लिए
ऊपर जो बैठा है, वही चुनता है और भेजता है
प्रतिष्ठा या लानत-मलामत
उसके हिस्से का काम उसे ही करने दो
तुमने टाँग अड़ाई और उसे रास न आई
फिर?

नन्हें मुन्नो ! सपना देखो

नन्हें मुन्नो ! सपना देखो
ऐसा सपना
जो आसमान के तारे तोड़ सके
तूफानी धारा को मोड़ सके
नभ के सीने को चीर-चीर
अम्बर को धरती से जोड़ सके।

सच मानो
सपना ही सच हो जाता है
जब कोई शिवा कोई प्रताप
कोई भगत कोई आजाद
कोई सिरफिरा माई का लाल
बचपन में देखे सपने को
मन के कोने में गीठ लगाता है
सपना निश्चय ही सच हो जाता है।

नन्हें मुन्नो ! तुम भी सपना देखो
ऐसा सपना
जहाँ बिखरे हों हीरा, मोती, माणक, पन्ना
सच्चाई के, विश्वास के, चरित्र के, अनुशासन के

रूपकथा के राजकुमार बन जाओ,
सोने के घोड़े को एड़ लगाओ
भर लो इन रत्नों से अपना खजाना
परम वैभव पर तुम्हें देश सजाना
बस समझो सच हुआ तुम्हारा सपना
देखो तो
बस देखो तो ऐसा सपना ।

सीपियां

दूर-दूर तक सागर बस सागर
कड़ी धूप सुबह से और हवा
लहरें पैरों को छूतीं आ-आकर
खुश हूँ मैं कुछ सीपियां पाकर ।

पुरी के समुद्र की बालू भूरी-भूरी
सीपियां छोटी बड़ी और चितकबरी
बचपन में सीपियां चुनीं अपने लिए
अब चुनता हूं अधि - अदू के लिए।

कुछ बिल्कुल छोटी हैं जैसे मुर्गी
कुछ सफेद बछड़े जैसी बड़ी हैं
कुछ की खाल है गैंडे जितनी मोटी
कुछ हाथी दादा जितनी तगड़ी हैं।

समुद्र बोला, ये खाने की चीज़ नहीं है,
वह भी खाता नहीं, इनसे खेलता है
उसके भीतर तो ख़जाना गड़ा है
समुद्र का पेट बहुत-बहुत बड़ा है।

सीपियों से खेलना दोस्तों के साथ
छोटे बच्चों को देना सबसे बड़ीवाली
बड़े बच्चों को देना एकदम छोटीवाली
तुम दोनों के हाथ खाली के खाली।

शहर और संवेदना

कल शाम शहर की प्रतिष्ठित सड़क पर
एक एम्बुलेन्स 'जाम' में फँस गयी
नीली बत्ती झपकती रही, साइरन बजती रही
आसपास आगे पीछे बसें, स्कूटर और गाड़ियां
एक दूसरे से सटी खड़ी रहीं
इंजन बंद कर प्रतिक्रियाहीन ज्यों की त्यों
किसी अचल सरकार जैसी पड़ी रहीं।

अभ्यस्त आंखें चुपचाप जाम को देखती रहीं
या क्या देखती रहीं पता नहीं
शायद कुछ भी नहीं
मरीज एम्बुलेन्स में अस्पताल जा रहा था
या अस्पताल से आ रहा था
किसी को पता नहीं
दर्द से कराह रहा था या बेहोश था, खामोश था
मौत से जूझ रहा था या जूझ कर वापस आ रहा था
किसी को पता नहीं
या कोई गर्भवती महिला थी
एक नन्हीं जान दुनिया में आने को बेचैन थी
किसी को पता नहीं
दिल का मरीज था या एक्सीडेन्ट का
खून चढ़ रहा था या सलाइन

एम्बुलेन्स में डॉक्टर था या नहीं
किसी को पता नहीं।

सड़क के दोनों ओर राहगीर और दुकानदार
अपनी-अपनी चाल में व्यस्त थे
सड़क पर जाम क्यों है
'जाम' में एम्बुलेन्स क्यों है
निकलने का कोई विकल्प है
किसी को पता नहीं
किसी को गरज नहीं
शहर की संवेदना 'जाम' में फंस गयी है
क्यों फँस गयी है
किसी को पता नहीं
फँसी हुई संवेदना दम तोड़ देगी
या जी उठेगी
किसी को पता नहीं।

बात बात में

बात बात में बात बन जाती है
बात बात में बात बढ़ जाती है
बनने-बढने के बीच दूरी है जो
किसी की किस्मत कहलाती है।

दूर बैठे दर्शकों में हम मजा पा रहे थे
ना-कुछ जो थे वे कुछ हुए जा रहे थे
उस्ताद माइक पर वाह-वाह क्या गा रहे थे
ठीक उनके पीछे थे ये, फोटो खिंचवा रहे थे।

मंदिर नया बनाने के हौसले को कुछ ही हैं जो अंजाम देते हैं
बाकी लोग हैं जो उस मंजर पर आते हैं, दुआ सलाम देते हैं
यही होता तो वाजिब था पर होता नहीं, कुछ करतबी हैं ऐसे
असल खुद को मनवाने अपना पत्थर दरवाजे पे थाम देते हैं।

समझते खुद को मीर तकी मीर, गालिब थे
खुशबू लगाये चम्पा - चमेली - जुही - गुलाब थे
हसरतों के मारे बेचारे गली में पड़े पाये गये
पास कोई गालिब थे, न उन पर कोई गुलाब थे।

जिसमें सुर जगह पर लगा हो वही तो गीत है
असल आदमी को पहचान लें तो वाकई जीत है
शहर में तो बेतरतीब कतारें हैं, भीड़ ही भीड़ है
उसूलों का जो पक्का है, वही तो अपना मीत है।

दुनिया में फरेब ढूंढते हो, क्या ढूंढ़ना पड़ेगा?
मनों के भाव पड़ा है, यों ही पड़े - पड़े सड़ेगा
सीढ़ी बहुत ऊंची है सच्चाई तक पहुंचने की
फिसलने की मिसालें हैं, देखें तो कौन चढ़ेगा।

जो चढ़ गया यह सीढ़ी वही पहुंचेगा बहिश्त के भी ऊपर और ऊपर
सितारे दिखते हैं आसमां में हाथों की पहुँच से भी ऊपर और ऊपर
यह आदमी का हौसला है दो पाँव चलकर चांद को भी न्यौत आया
सच्चाई वह बुलंदी है खुदा भी डरता है, वो है उससे भी ऊपर और ऊपर।

फरमाइशी कविता

किसी ने कहा कविता लिखो
और मैंने लिख दी
उसी तरह जैसे
किराने की दुकान पर चीज़े बिकती हैं
कैसी चाहिये, कितनी चाहिये
और मैंने तौल दी ।

उसी तरह जैसे अफ़सर घूस लेता है
टेबिल के नीचे खिसकता
लिफ़ाफ़ा जितना मोटा होता है
उसी माप से फाइल भरता है ।

उसी तरह जैसे
फ़िल्में साइन होती हैं
जितना 'एडवांस' होता है
उतनी 'डेट्स' मिलती हैं ।

उसी तरह जैसे कलकत्ता कार्पोरेशन के
चुनाव में वोट डलता है
जिसका दादा पाइपगन के साथ सड़क पर होता है
अंदर उसी पर ठप्पा लगता है ।

कविता कोई कैसे कहने से लिखता है
यह ऐसा सुर्ख़ पेड़ है जो भीतर से उगता है
अपनी ज़मीन चुनता है, अंदर-अंदर चुरता है, गलता है
जड़ों में फैलता है
तब कहीं बाहर दिखता है ।

नानी कहानी कहती थी
राजा बाग में मीठी बोली सुन
कोयल को पकड़ मँगवाता
पिंजरा डलवाता, पर पक्षी चुप रह जाता
शरीर कैद भले हो जाये
गान बंदी नहीं हो पाता ।

फरमाइशी कविता लारलप्पा
इलू-इलू इना-मिना-डिका चाहे बन जाये
ऋग्वेद की ऋचा नहीं बन सकती
रामायण, भागवत और गीता नहीं
कामायनी, कनुप्रिया, यामा नहीं
पल्लव, निर्झर, त्रिकाल संध्या भी नहीं
नहीं बन सकती, नहीं बन सकती ।

न किसी शाही फ़रमान से वाल्मीकि
कालिदास, तुलसी, सूर या मीरा

पंत, प्रसाद, दिनकर या निराला
अज्ञेय, भारती या भवानी दादा की पैदाइश होती
न हुई है, न होगी
न भूतो, न भविष्यति ।

कविता वह स्रोत है
जो पहाड़ को फोड़
बंजर ज़मीन में
पत्थर के बीच
सहसा निर्मल निर्झर बन
फूट पड़ता है।
नहीं तो लाख सींचो
मिट्टी गोड़ो माथा फोड़ो
फिर भी रीता का रीता है
फरमाइशी कविता
कोई कैसे लिख सकता है ।

मेरे शहर की पीड़ा

उस शहर को क्या नाम दिया जाये
मेरे दोस्त ! या नहीं दिया जाये
जहां निष्क्रियता की पहचान
एक जवान पीढ़ी का इतिहास बन जाये।

सुनते हैं यहीं से आग सुलगती थी
इसकी हवा से तेवर बदलता था ज़माना
जो सोचता था आज, कल वही होता था
टिका जो इसकी तुला पर, वही कहलाया पैमाना।

वैश्वानर अग्नि हो या फैलाना हो दावानल
अध्यात्म की भूख लिये चला आया कोई पैदल
तर्क, न्याय, सत्य की कसौटी पर कसना हो तो यहाँ आया
दीवानगी की बानगी कैसी भी हो, मचा देती थी हलचल।

तरकश खाली होते न होते यह तीर भरता था
सिंहनी का दूध पी मां का सपूत हुंकार भरता था
देश पे मिटनेवालों का यह आशियाँ हुआ करता था
सूरज जो पूरब से निकलता था, यह पूरब हुआ करता था।

वही शहर दोस्त मेरे! आज मुर्दा सोया है
मर्दानगी के दम भरनेवाले ने पुरुषार्थ खोया है
दमखम लगा बस यह हमेशा जुलूस बन जाता है
भूल जाता है इस पेशे में इसने क्या - क्या खोया है।

ब्लडग्रुप

एक खाली शाम
निरुद्देश्य खाली मन घूमते घुमाते
स्टालों और ठेलों का चक्कर लगाते
हठात् दीख पड़े मित्र एक युगों पुराने
सदियों से जिनकी खबर नहीं थी
उम्र ढल तो रही थी
(हम दोनों की ही)
पर उनके चेहरे पर रौनक वही थी
जवानी जैसी।

हमारे बीच
बातें ढेर सी अनकही थीं
अनकहे ही पाँव
ले पहुंचे चायघर में
विषय शास्त्र पुराणों की तईं
अनगिनत और गहन
चुस्कियों में
खुलते गये परत दर परत।
कॉलेज में प्रॉक्सी के नुस्खे
इंटरव्यू नौकरी लाइसेंसिंग बजट
क्रिकेट सिनेमा राजनीति और नाटक
बेशुमार बातें कही गयीं

सुनी गयीं
आकर अटक गयीं साहित्य पर।

मैंने हर शहराती की तरह युग का रोना रोया
राशन की लाइनें, विद्युत संकट और नयी पीढ़ी
सोचा, मित्र भी अब बिसूरेंगे।
पर गजब,
उन्होंने हाथ को हल्का-सा झटक दिया
हाथों में नस्सी की डब्बी खेल गयी
ओठों पे मुस्कान
इतमीनान से उनकी रुमाल ने मूछों को पोंछा
ये शब्द हवा में तैर गये।
अनास्था से मेरा कोई वास्ता नहीं
क्योंकि यह मेरा रास्ता नहीं
मैं जिस शहर में रहता हूँ
उसे मैं प्यार करता हूँ
उसके सदके हजार करता हूँ
उसी के लिए जीता हूँ और मरता हूँ
अपने शहर को मैं प्यार करता हूँ।

मित्रवर !
मत गिनना मुझको उनमें
जो पीढ़ी दर पीढ़ी यहीं रहते हैं
दिन भर में कई पैकेट सिगरेट

कई प्याले कॉफी पीते हैं
पर जब मिलते हैं यही कहते हैं
वे कुंठा में जीते हैं
सौदे में उनके भारी भरकम शब्द दायें बायें
संत्रास, यातना, पीड़ा, मृत्युबोध
जैसे किसी दुकान की चौखट पर
रिद्धि लाभ सिद्धि शुभ।

मैं रात खिड़की खोल आकाश देखता हूँ
तारे पड़ोसी के टी वी एन्टीना में उलझे होते हैं
मुझे अच्छे लगते हैं
दोनों
तारे और एन्टीना
दोनों का अपना-अपना आकर्षण है
न होता तो क्यों धनी किसान का इकलौता बेटा
तीस एकड़ की खेती छोड़
गाँव से भाग
मेरे घर जूठे बर्तन माँज रहा होता।

बन्धु सुनो !
ये दुमंजिली बसें, टिं टिं करती ट्रामें
कोलतार की चपचपाती सड़कें
मेट्रो रेल के ढूहे
हफ्ते - हफ्ते बदलती फिल्में

पास से गुजर जाते हसीन चेहरे
फुटबाल से लौटती भीड़ें
इन सबका अस्तित्व सही है
क्योंकि मेरा ब्लडग्रुप यही है।

हँसी और विकास

जब भी हँसता हूं, लगता है
कुछ गलत हो गया
कितना कुछ करना था
समय खो गया।

हँस सकता हूं यदि
तंदुरुस्ती इससे बनती हो
मांसपेशियां मेरी ही नहीं
जन-जन की कसती हो।

हँस-हँस के ही तो उन्होंने
दिखाया है अंगूठा
राजधानियों में बैठे थे
होरी को लूटा धनिया को लूटा।

संथाल की बेटी हो या
भील का बेटा
पीठ से पेट सटा है
और हँसी पे साँप लेटा।

विकास के नाम पे
उनसे पैसा आता है
फिर वह जाता कहां है
जहाँ से आता है वहीं चला जाता है
हँसी-हँसी में बेचारे 'उनका'
विकास हो ही जाता है।

शान्तम् पापम्

अंग्रेजी के तीन शब्द महान् हैं
ये जब आपस में मिल जाते हैं
क़हर ढाते हैं।
बड़े से बड़ा अपराध कर
आँख और कान भींच
'आई एम सॉरी' के गंगाजल में
लगा दो हलकी सी डुबकी
शान्तम् पापम् ।

अंग्रेजी और मैकाले

आज रात मुझे नींद नहीं आई
गाँव की एक बहू ने
डेढ़ साल की कच्ची बच्ची को
ऊँट को कैमल, हाथी को एलिफेंट
घोड़े को होर्स
कहकर अंग्रेजी पढ़ाई
मैं बिस्तर में छटपटाता रहा
क्योंकि मैकाले अपनी कब्र में
गुनगुनाता रहा।

जब

जब
कोई अपने ही देश में
शरणार्थी बना दिया जाता है
ऐसा लगता है
जैसे बहेलिया जाल बिछाता है
किसी परिंदे का पर काटकर
उसे उड़ने को छोड़ दिया जाता है।

जब
एक नहीं, दो नहीं, लाखों लोग
एक पूरी कौम
अपनी प्यारी माटी से कटकर
दर-दर ठोकर खाती फिरती है
विडम्बना है ऐसे में
लीडरों की ब्रेकफास्ट पेरिस
डिनर लंदन में होती है।

जब
हजरतबल के दरिंदों को
बिरयानी परसी जाती है
कसम धरा लो
इस साजिशे नापाक पर

मेरे देश की आँखें
शर्म से झुक जाती हैं।

जब
मेरा जाँबाज सिपाही वादी में
किसी पाकी गोली का निशाना बन जाता है
सच कहता हूँ
ज़िंदा रहती है वो मगर
मेरी मां की कोख का एक कोना
हमेशा को मर जाता है।

जब
घाटी ही नहीं
किश्तवार और डोडा में
ख़ूँख्वार भेड़िये गाँवों में
जवान बेटों को जिबहकर मांस
उनके माँ-बापों के मुँह में ठुँसवाते हैं
दुधमुँहे बछड़े का ताजा रक्त पिलाते हैं
ज़िंदों की खालें खिंचवाते हैं
पेड़ों से उल्टा लटकाते हैं
बम शरीरों पे बाँध चिनगारी लगवाते हैं
सुंदर चेहरों से आँखें अलगाते हैं
मां बहनों पर कैसे-कैसे क़हर ढाते हैं

तुम्हें नहीं लगता
सन् सैंतालीस की फिर से तैयारी है ?
खून से सिंची केसर की क्यारी है
ये वार्ता की कहानियाँ झूठी हैं
इस लोकतन्त्र की चर्खियाँ टूटी हैं
ये बयानबाजियाँ मक्कारी हैं
केवल कुछ वोटों की लाचारी हैं।

जब
तुम्हें ऐसा लगता हो
तब भी तुम चुप बैठोगे ?
इस इंतजार में
कब ये खबरें अंग्रेजी अखबारों में छपें?
इस इंतजार में
न्यूयार्क, टोक्यो या एम्सटर्डम से
इनके पर्चे बँटे?
इस इंतजार में
जेनेवा, कैरो या सिडनी से
इंटरनेशनल सेमिनार का बुलावा आये?
या इस इंतजार में
चीनी दूतावास तुम्हें
फ्री रिटर्न टिकट भिजवाये?

ऐसा कभी, कभी नहीं होगा, मेरे दोस्त !
कश्मीर की कसम
भारतमाता की कसम
केवल अपने बाहुबल से
तुझे यहाँ इज्ज़त से शान से रहना होगा
बहुत सह लिया
अब अपमान नहीं सहना होगा।

तो,
नींद भगा दो, देश जगा लो
क़लम को दुधारी तलवार बना लो
समर का केसरिया बाना सजा लो
प्रलयंकर शिव को बुला लो
ताण्डव का तीसरा नेत्र खुला लो
रण की भेरी और वाद्य बजा लो
चण्डी का खड्ग औ खप्पर सजा लो
जो खण्ड-खण्ड किसी ने किया था
उस भारत को फिर से
अखण्ड बना लो।

बुलंदी

चोट शरीर पे कहीं भी लगे
सबसे पहले दिमाग झन्नाता है
ये चोटें तो मस्तक पे लगी हैं
फिर भी दिल्ली में क्यूँ सन्नाटा है
कश्मीर हमारा जल रहा है धू-धू
सत्ता के गलियारों में मस्ती पगी है।

ज़ाहिर है साजिश में विदेशी हाथों का होना
पर इसका रोज-रोज क्या रोना-धोना
मर्द हो तो उठो ठोकर मार के
दीवाल पर बंदूकें क्यों टंगी हैं ?

कोई सूडान से, अफगानिस्तान से आया होगा
उसने इस्लामाबाद में प्रशिक्षण पाया होगा
पहले चौराहे पे ले जाकर खत्म करो उन्हें
जो इन्हें हमारे घर बुलानेवाले जयचन्दी हैं।

मानवाधिकारों की बातें आजकल बहुत छपती हैं
इन्हें हवा देनेवाले यहीं के कुछ खबती हैं
खाते हैं यहाँ का, गाते हैं वहाँ का
काले साहब हैं ये, मैकालेपंथी हैं।

कोई समस्या नहीं जिसका समाधान न हो
हारता है वही जो हमेशा सावधान न हो
मन का ज़ोर पैदा करो, कूच का हुक्म दो
देशभक्ति से चमकती मेरे सैनिक की वर्दी है।

देश अब और नहीं टूटेगा, बहुत हो चुका
छलना से, प्रवंचना से घड़ा भर चुका
शासन अपने घुटने टेके तो टेकता रहे
जनता के हौसलों में हिमालय-सी बुलंदी है।

आपातस्थिति का अंकगणित

एक अदद झूठ को पुख़्ता सच बनाना हो
तो कहिये उसे कितनी बार दोहराना हो
गोबेल्स का पुराना फार्मूला फेंकिये
हमारा नया ऐकिक नियम देखिये।

चूँकि एक सफ़ेद झूठ बराबर
पद जोड़ अधिकार गुणा ढिठाई
बटे एक सौ सच्चाई
और चूँकि पद जोड़ अधिकार बराबर
आकाशवाणी, दूरदर्शन, वृत्तचित्र और सेंसर
और चूँकि ढिठाई बराबर
एक सौ धुँआधार भाषण
इसलिये सबको यथास्थान रखें
एक सौ एक सौ ऊपर नीचे काटें
बायें दायें छाँटे।

उत्तर
सच्चाई बराबर
सेंसर जोड़ आकाशवाणी दूरदर्शन वृत्तचित्र
धुँआधार भाषण
जिनके नीचे छिपा हो
सफ़ेद झूठ का आश्वासन।

वीर रस का कवि सम्मेलन और आपातस्थिति

न सरहद पर बंदूकें गरजती हैं
न शहर में सायरन लरजती हैं
हाटों बाजारों में, फैक्टरी या फार्मों में
बस स्टैंडों, हवाई अड्डों, प्लैटफार्मों में
न आज कोई चन्दे का डिब्बा उछालता है
न कोई गले में फूलमालाएं डालता है
न जय जवान के नारे की आवाजें सुनती हैं
न औरतें गर्म स्वेटर व मौजे बुनती हैं
न फ्री कैन्टीन, न फ्री स्टोर्स से अब वास्ता है
सिने ऐक्टरों का ट्रक शहर की गलियों से लापता है
रेडियो की आवाज में न नेता हीरा-सोना मांगते हैं
टेलीविजन सिनेमा साबुन-क्रीम के इश्तहार छापते हैं
फिर क्या तुम्हें कुत्ते ने काट खाया
जो तुमने वीर रस के कवियों को बुलवाया ?

समय देखो, समय पहचानो,
रेलें समय से चलती हैं
इसे अपना सौभाग्य मानो
कितना अमन है, कितना चैन है
क्या हुआ जो दिल बेचैन है

साँस घुटती है, वाणी मौन है
खुली हवा महँगी है
आदमी का जिस्म सस्ता है
जेलों की हालत खस्ता है
हर जेलर ने हर सेल के बाहर
'नो वैकेन्सी' का बोर्ड लटका दिया है।

फिर अच्छा होता तुम
नचनियों को बुलवाते
बुलवाकर नचवाते
चार सूत्र की माला में
बीस मनके डलवाकर
लार-लप्पा लार-लप्पा
दर्शकों को सुनवाकर
उनका मन बहलाते।

फिर से इसीलिए कहता हूं
क्या तुम्हें कुत्ते ने काट खाया
जो तुमने वीर रस के कवियों को बुलवाया ?

मुक्त मुक्तक

देश का पैसा है, मेरा क्या
देश तो मेरा है, तेरा क्या
तुम चाहो तो मरो देश पर
इसमें मेरा क्या और तेरा क्या।

धर्म को माना वही जो कर्मकाण्ड करता है
कर्म को माना वही जो तिजोरियाँ भरता है
अब चलाचली का मौसम है
ठंडी आहें क्यूँ भरता है।

विचार वही, जो अखबारों में छपते हैं
काम वही, जो सारे दूसरे करते हैं
मौलिकता का तकाजा हमसे क्यों
हम अच्छा खाते हैं, मौज करते हैं।

क्या कहा, घर के बाहर भी एक दुनिया बसती है
जहाँ भूख है, रोग है, गर्म हवा चलती है
ठीक ही कहा होगा, कभी-कभी मुझे लगता है
ठंडे कमरे में टीवी से गर्म हवा क्यों निकलती है।

समय न किसी के रोके रुकता है
कर ले जो तेरा अन्तर कहता है
रुक गया, थक गया, चुक गया
तो बस तू है और तेरा खुदा है।

जिंदगी किसी के रोके क्यूँ रुके
आदमी किसी के आगे क्यूँ झुके
ऊँचाई है तो है, जा छू ले आसमान
पहले इसके कि अब चुके, अब चुके।

सुबह-सुबह अंग्रेजी अखबार और चाय की चुस्कियां
बहुत उदास हो जाते हैं देश के गम में बड़े मियां
पतलून पहनी, तैयार हुए, पैरों में डाली जूतियां
वही दाना, वही पानी, वही रोज की कियाँ कियाँ।

नाटक

चेहरे पर कुछ पोत-पात
वेशभूषा पहने
दृश्यावली के सामने
प्रकाशवृत्त में खड़े हो
कुछ बोलना ही यदि नाटक होता
उसे पांचवा वेद क्यों कहा जाता
हर आदमी अभिनेता न हो जाता !

चरित्र जो भी हो, जैसा भी हो
ऊपर-ऊपर जो दिखलाई देता
वह सच नहीं भी होता
साकार तभी होता
जब अंदर से बाहर होता
नहीं तो रावण भी राम की पोशाक पहन
धनुष-बाण हाथ ले
दर्शकों की प्रशंसा पा इठलाता
फूला नहीं समाता
हनुमान अपना हृदय चीर
उसी रावण को दिखलाता।

समाचारों का कोलाज

एक

पंदरह अगस्त उन्नीस सौ चौरानवे
देश की आनबान जल रही है
दूरदर्शन पर वाचिका शान से मुस्कुराते हुए समाचार पढ़ रही है
हुबली में तिरंगा नहीं फहराने दिया गया
छियासी घायल, पांच को गोली से मारा गया।
अरे नादान! बोल जय हिन्द, मेरा देश महान्!
अब तो कोर्स में
'डायर' की कहानी ही नहीं है
देखता क्या है
मेरे चुल्लू में पानी ही नहीं है।

दो

'परिंदे को पर भी मारने नहीं दिया जाएगा'
विश्व ने अयोध्या में अचंभे से देखा
शिखर पर भगवा लहरा रहा है।
'पंदरह अगस्त को हुबली के मैदान में
तिरंगा फहराने नहीं दिया जाएगा'
फिर से देखा
चप्पा-चप्पा पुलिस को चकमा देता

कंटीले तारों पर लटका
जाँबाज अनंत मुस्कुरा रहा है
'जन गन मन' गा रहा है
रानी चेनम्मा के मैदान में
तिरंगा लहरा रहा है
जयानंद और रमेश साथ गा रहे हैं
इसी बात पर सिपाही अंधाधुंध
उन्हें पीटे जा रहे हैं।
तुम्हें क्या पता नहीं
स्वतन्त्र भारत में तिरंगा लहराने की सजा
सजा-ए मौत है !
जो माँ की आन पर मिटता हो
उसे गोली मारो
क्योंकि हमारी कुर्सी की कीमत
चन्द वोट है।

तीन

हुबली की गलियों में देशपांडे नगर में
श्रीनिवास कुट्टी, मंजुनाथ कराड, प्रसन्न रानडे
मोइली की गोली से मारे गये।
जुर्म था जवानी का जोश
जो देश को परवान चढ़ा था

जो तिरंगे को लाल किले से न सही
रानी चेनम्मा के मैदान में
फहराता देख
खुशी से उमड़ पड़ा था।
लोगों ने देखा
शहीदों के शवों पर तिरंगा
और उनकी आँखों में
भगत सिंह, राजगुरु, सुखदेव
का चित्र मढ़ा था।

चार

आज का अंतिम समाचार
कड़ी सुरक्षा व्यवस्था में
श्रीनगर के प्रसिद्ध लालचौक में
पाकिस्तानी राष्ट्रध्वज फहराया गया
और भी मोहल्लों - खानयान, नौहट्टा,
शराफकदल, सौरा, डलगेट, बुछवारा,
कमरवारी, छत्तावल में भी फहराया गया।
कहीं से कोई गिरफ्तारी
या हिंसक घटना का समाचार नहीं है।
पत्रकार सम्मेलन में
गवर्नर कृष्णराव ने यह बात कही है

शांति व्यवस्था सब जगह सही है
प्रधानमंत्री के आदेशों का
पूरा पालन हो रहा है
हमारे प्रशासन का मनोबल
ऊँचा हो रहा है।

फिर से बनी अयोध्या योद्धा के विदूषक

क्या तुमने समझ लिया
यह ताश का खेल है
काट निकाली हत्था मार लिया
हारा हुआ अपने घर हो लिया।

क्या तुमने समझ लिया
बाबर आका है तुम्हारा
मीर बाकी बन बैठे तुम
तोपों से मंदिर ढहा दिया।

क्या तुमने समझ लिया
मुग़लिया सल्तनत है दिल्ली में
खौलते कड़ाहों में डलवा दिया
चिनवा दिया ज़िन्दा दीवारों में।

क्या तुमने समझ लिया
गुलाम देश है फिरंगी का
डायर की बंदूकें बन
बाग को श्मशान बना डाला।

विदूषको! और जितने विदूषक हो तुम
जितने रूप और मुखौटे हैं तुम्हारे
मुलायम हो कि लल्लू हो कि वी पी हो
मधुकर हो भुल्लर हो कि हुसैनी हो
लीगी साये में दुबके सफेद टोपीवाले हो
या विदेशी टट्टू हंसिया हथौड़ीवाले हो
इस बार पारी तुम्हारी रणचण्डी से है
सिंहवाहिनी भवानी काली कराली से है
जिसके सपूतों का तुमने लहू बहाया है
उस ताण्डववाले त्रिनेत्री कपाली से है
जिसकी बांसुरी को तुमने छीना है
उस महाभारत के चक्र सुदर्शनधारी से है
रावण के दसों शीश काट भूलुंठित करनेवाले
धनुषधारी प्रभु रामचन्द्र त्रिपुरारि से है।

अब तक तुमने जो भी समझा हो
विदूषको ! अब समझ लो
सरयू के शोणित ने धो दिये
तुम्हारे लिपे-पुते चेहरे
अयोध्या में जिन लाड़लों ने शहादत दी है
मेरे देश की भाग्य-रेखा बदल दी है।

रामलला का जयघोष
भारतमाता की आरती है

करोड़ों कंठों की एक आवाज
अरिदमन राम को पुकारती है
बलिदानी परम्परा तो युग-युग से
मेरी मातृभू की पावन थाती है।

तीर्थाटन : एक वायवी सत्य

आज रात मैं जाग रहा हूँ
थका सारे दिन का
पर थका हारा नहीं हूँ
लगता जैसे
यह समय सृजन का
मेरे मन का
स्वतन्त्र सत्ता
न जिसमें कोई तिनका।

साथ मेरे जागते होंगे
बटमार पक्षी पेड़ों पर
अंधकार में अकस्मात्
एक तीखी चीत्कार
उनकी चिंता, उनका आहार
मेरा पक्षी निर्विकार, निराकार
न कोई आहट, न सीत्कार
निकलता मुझसे चुपचाप
कालिदास का 'मेघ' बन जाता
रामटेक पर ऊँचे उड़ते-उड़ते
अतल सिंधु में गोता खाता
क्या पायेगा, थक जायेगा
डूबेगा या उतरायेगा

करता नहीं विचार
बिल्कुल भोले मन का
हवा गुजर जाये आर-पार
ऐसे छुईमुई तन का।

भौंरा है,
यहाँ बैठता, वहाँ उड़ जाता
गुरु हथौड़ा हाथ लिए
'पत्थर तोड़ती' दिखती उसे वह
'इलाहाबाद के पथ पर'
मलयानिल के झोंके से
'विजन वन वल्लरी' पर सोयी 'जूही की कली'
का रस लेता-देता
दारागंज की गली-गली में चक्कर खाता
निराला के आले में घुस जाता
महाकवि का डंडा सिर पर पड़ता
हाय - हाय कर जान बचाता
गिरता पड़ता ठोकर खाता
भटक-भटककर वासुकीनाग में
'सांझ' पहर तिमिर के झुटपुटे में
'गोपा गौतम' से अठखेली करते
तहमद बाँधे

जगदीश गुप्त सहलाते, स्नेह जताते
मरहम पट्टी से घावों को ढककर
बाबा शिवशंकर भोलेनाथ की नगरी में आकर
सुँघनी का एक झोंका पाता
जय जयशंकर नाद गुँजाकर
प्रसाद की पोथी पर मंडराता
'शिला की शीतल छाँव तले
पुलकित होकर भींगे नयनों से'
'आँसू' की दो बूँद गिराता
गीतों का मकरंद चुराता
सूर, तुलसी के दोहे, मीरा के भजन
रहीम, रसखान, रत्नाकर के पद
गुन-गुन गुन-गुन गाता जाता
कबिरा की उलटबाँसियां उधेड़ता
उड़ता जाता, उड़ता जाता
भारतेन्दु हरिचंदजू को माथ नवाता
छंदों का आनंद उठाता
'चौपट राजा' के फंदे में फँस
'अंधेर नगरी' में फाँसी पाता
सीधे स्वर्ग की सीढ़ी चढ़ता
नारद की वीणा की गुंजन से
आत्मा अजर है, अमर है, वाणी सुन
संसार चक्र में वापिस आता

नचिकेता के प्रश्नों का उत्तर पाकर
बिल्कुल हल्के मन का
सुकुमार पंछी हो जैसे वन का ।

'नगपति विशाल' की बर्फानी शीतलता में
'नगाधिराज' के गगनचुम्बी शिखरों पर
'उर्वशी' के नूपुरों की झंकारों की मस्ती में
दिनकर के भावों में डूब-डूब उतराता
कुछ सुस्ताता, कुछ इठलाता, कुछ इतराता
अल्मोड़ा के 'द्रुमों की मृदु छाया में
बालाओं के बाल-जाल में लोचन उलझाता'
'पल्लव-पल्लव', 'निर्झर-निर्झर'
प्रकृति के संत सुमित्रानन्दन पंत का साथ निभाता
अगले ही क्षण नौका पर होकर सवार फिर
गंगा, यमुना, लुप्त सरस्वती के संगम आता
त्रिवेणी स्नान कर रूपमुग्ध हो प्रसन्न चित्त से
वर्षा की मीठी मोटी धार झेलता
महादेवी के बागीचे में शरणागत भाव से प्रविशित हो
जोरदार एक झटका पाता
विशालकाय उनके कुत्तों की अन्वेषी नजरों से
कितना भी बायवी हो, पर बच न पाता
भौं-भौं की गुस्सैली फटकारें
लपलपाती जीभों की आक्रामक मुद्राओं से भयाक्रांत हो
लुका-छिपी का खेल खेलता

क़लम हाथ ले 'यामा' की पांडुलिपि पर झुकीं दीदी को
नैराश्य भाव से बँगले के बाहर से ही निहार
क्षण भर में छूमंतर हो जाता
जान बची तो वादा फिर आवन का
दीदी को पाय लागी
इंतजार रहेगा और एक सावन का।

दूर कहीं से
लो पीयो-पीयो का स्वर कानों से टकराता
मधुर रसीली वाणी यह किसकी
कुछ-कुछ जानी पहचानी-सी
अंतर को छू-छूकर आती
मन-मरुथल को सींचित करती
सूखे वीराने में 'मधुकलश' को ढुलकाती
छलकती-छलकाती 'मधुवाला' के कोमल हाथों में
बच्चन की 'मधुशाला' सी।
सरपट-सरपट दौड़ पड़ा घोड़ा-सा मेरा भौंरा
अपने घर में झूलती कुर्सी पर बैठे
कविवर करते काव्य-पाठ
कुछ मित्र, कुछ छात्र, रसिक श्रोता
मंत्रमुग्ध तन मन की सुध भूल
आत्मसात् करते ये क्षण महान्
कभी कानों से, कभी आँखों से पीते
यह जो है उनका सपनों का वर्तमान

नतमस्तक हो कवि-प्रतिभा को कर प्रणाम
पालथी लगा जमकर बैठ, लेता प्रतिपल
एक-एक पंक्ति का आस्वाद अंतस्थल
विस्मरण हो जाता करना प्रयाण
एक यही यथार्थ और सभी कुछ अज्ञात
समय यूँ बीता जाता
जैसे नींद का एक मीठा झोंका आता
आँखें खुलतीं तो हो जाता प्रभात
उस अलसाये में भी खुमार
एक चित्र विचित्र स्पंदन का
घूमा करता है चित्त वहीं
जहां कानन है नन्दन का।

प्रयागराज को कर अंततः नमस्कार
वायुयान पर होकर सवार
कुर्सी की पेटी बांधे मायानगरी मुंबई पर मँडराता
एयर हॉस्टेस के हाथों की कॉफ़ी की चुस्की में
दीनजहान का दुख बिसराकर, पैर फैलाकर
जैसे ही सोने को होता, झटका खाता
धरती के झकझोले और तेज शोर हावी हो जाता
कानों में रुई डाले मेरा भौंरा बाहर आता
महानगर के धूल, धुंवा, भाप के समीकरण में
काली-पीली टैक्सी का कभी दौड़ना, कभी रुकना

और रुके तो रुके ही रह जाना
मन को भाये या न भाये, मन मसोस कर बैठे रहना
बस एक आस और विश्वास कि हम होंगे कामयाब
बांद्रा के साहित्य सहवास में 'शाकुंतल' दरवाजे के पास
उस चिप-चिप गर्मी में भी शीतलता का आभास
शायद पास कहीं 'ठेले पर हिमालय' लदा हो।
दो माला ऊपर चढ़कर घंटी का प्रत्युत्तर
मानों 'कनुप्रिया' के कनु ने ही दरवाजे खोले हों
साक्षात् धर्मवीर भारती खुलकर हँसते बढ़ते आते
जैसे दो बिछुड़े बहुत दिनों के बाद मिले हों
मीठे-मीठे प्रसंग कवि और कविता खुलते जाते
बार - बार उनमें विष्णुकान्त शास्त्री अवश्य आ जाते
बांग्लादेश की प्रसव पीड़ा में जोखिमभरी यात्राएँ
ढाका की एक रसभीनी कविता-प्लावित संध्या स्मरण कर
हृदय रोग के रोगी क्षीणकाय भारती मुस्काते जाते।
पुष्पा जी की गरमागरम चाय और पकौड़ों का संयोग
पुस्तक मेले जैसे उस ड्राइंगरूम में वह रसभीना भोग।
अकस्मात् शरद जोशी, सूर्यभानु गुप्त अवतरित होते
'धर्मयुग' के पन्ने कालचक्र को झुठला फिर से संपादित होते
कविता और कथा, उपन्यास-गज़ल, व्यंग्य में घुलमिल जाते ।
तभी सामने 'फुलराणी' से सत्यदेव दुबे
झोला लटकाये बाल बिखराये बेतरतीब दाढ़ी बढ़ाये

अपने नाटक के बुद्धिजीवी पात्र की तई
चेहरे पर मायूसी का पोस्टर चिपकाये
झाँकने आते, पकड़े जाते
फोन लगा ऊपर से चंद्रकांत बांदिवडेकर बुलवाये जाते
किम् आश्चर्यम् ! गोविंद मिश्र भी, वहां थे साथ में आते
मजमा यह भारती के घर नहीं तो और कहां जमेगा
साहित्य और नाटक का गठबंधन क्या यहीं थमेगा।
ये कुछ मीठे क्षण मेरे जीवन की थाती बन जायेंगे
कितने भी 'अन्धे युग' आयें जायें
ये अविस्मरणीय रह जायेंगे
स्वप्न जैसा सत्य और वह न भूलनेवाली शाम
अकस्मात् तिरोहित हो जाती मधुर स्मृति के नाम।
कैसे भी सुन्दर हों क्षण, मीठे हों
कालचक्र चरखे-सा चलता है आवर्तन का
आयु बढ़ती नहीं, घटती है, गणित यही है
समय सरिता में अवगाहन का।

भौंरे को याद अचानक आई
दिल्ली कैसे मैंने बिसराई
भवानी दादा क्या सोचेंगे
सात घाटों का पानी पी आया
मेरा तुमको स्मरण ही न आया
यमुना प्रदूषित है यहाँ तो क्या है, मैं तो हूँ
जो भी हूं, जैसा भी हूं, तुम्हारा हूं

तरह-तरह के गीत रचता हूँ
'जी हाँ मैं गीत बेचता हूँ', आओ तुम भी ले लो।
दादा, आपका गीत खरीद सकूं क्या कूवत मेरी
जन्म-जन्म के पुण्य संचित हों, तब भी देरी
कुछ पल आपके पास बैठने का सुख लेने दो
नया 'पेस मेकर' लगा आपको मुझे छूने दो।
हाँ, हाँ, यहाँ छूकर देखो, तुम्हें अच्छा लगेगा
हाथ पकड़ अपने खद्दर के बनियाइन के नीचे
मेरी अँगुलियाँ सरकाते बोले
यह तार छाती के ऊपर से जाता
अब पांच बरस के लिए ऑपरेशन से छूटा नाता।
दादा ने कैंटीन से चाय मँगवाई
अपनी गरदन के करिश्माई लटके-झटके देकर
आग्रह करने पर छोटी-छोटी नयी-नयी कविताएँ सुनाईं
आपातस्थिति के समय उनकी अद्‌भुत साधना
'त्रिकाल संध्या' की पैनी यादें ताजा हो आईं।

दादा से ले विदा भौंरे की मोटर आगे बढ़ ली
अज्ञेय के दरवाजे रुक, प्रतिहारी को पहचान बताई।
लॉन में एक दरख्त सिर ताने खड़ा था
ऊपर डालों के बीच प्यारा-सा एक झोपड़ बना था
उसी कोने से दी हल्की-सी आवाज सुनाई
संभवतः वात्स्यायन नयी रचना में खोये होंगे
सृजन के क्षण होंगे या कुछ यादों में सोये होंगे

प्रतीक्षारत हो, उस परिवेश का अनिर्वचनीय आनन्द उठाता
कवि की रचनाधर्मिता के एकान्त का वह साक्षी बन जाता।
वृक्ष की एक चिड़िया से वे पूछ रहे होंगे
'तुम मुझे एक तिनका दोगी उधार'
बैठा मैं 'कितनी नावों में कितनी बार'
खाली है मेरा गेह, खोज रहा हूँ तुम-सा नेह
किसी शंखपुष्पी से कहते होंगे
कितना सुहाना है यह प्यारा-प्यारा उजास
'मैं तुम पर एक कविता लिखना चाहता हूं'
यायावर-कवि-निबंधकार
मृदुभाषी उत्तुंग व्यक्तित्व के धनी
'शेखर' और 'द्वीप' के यशस्वी कथाकार
अब सामने बैठे बतियाते थे
दद्दा मैथिलीशरण गुप्त की कृतियों की चर्चा करते
कहीं स्वप्निल स्मृतियों में खो जाते थे
'यशोधरा' ओ 'साकेत' के विरह-मर्म में पैठ कहीं
आंखों की कोरों से दो आंसू ढुलके आते थे
वही अज्ञेय थे जो इतने कठोर समझे जाते थे।
जाग रहा था भौंरा या केवल सपना था
अनुभव यह कितना नितान्त अपना था
कवि-हृदय की करुणा के संवेदन का
कोना-कोना भींग गया था मेरे अंतर्मन का।

इस जीवन्त अनुभव को मन-गठरी में बाँधे
एनएसडी में मित्रों से मिलने

और एक नाटक देखने की साध साधे
ऑटो पकड़ मंडी हाउस को चल पड़ा भौंरा
शायद मिल ही जाये कोई अपने जैसा सिरफिरा।
श्रीराम सेन्टर के बाहर मन्नू भंडारी
'बंटी' का हाथ थामे खड़ी थीं
हंसी के फौव्वारे छोड़ते घेर खड़े थे
'तीन एकान्त' के तीन पात्रों जैसे
निर्मल वर्मा, भीष्म साहनी और उषा प्रियंवदा
जो भारत में दिखती हैं केवल यदा-कदा
उधर 'बतूता का जूता' पहने सर्वेश्वर उलझ रहे थे
उनके हाथों में थी उनकी पतली-सी 'बकरी'
तो नरेन्द्र कोहली के करकमलों में थी भारी सी गठरी
दरियागंज के प्रकाशक से किसी तरह छूटकर आये थे
हाँप रहे थे ऐसे जैसे अभी-अभी
किसी 'कारा को तोड़ा' हो
तीन-तीन किलो के 'अभ्युदय' और 'महासमर' के खंड
गठरी से बाहर मुँह बाये थे
व्यूहबद्ध सन्नद्ध खड़ी थीं उनमें सेनाएं आमने-सामने
राम और रावण, पांडव और कौरव की
आवश्यक थे ये भीषण रक्ताक्त युद्ध
ताकि मानवता जीवित रहे
और यह कहे
मूल्य सनातन हैं, सत्य हैं

लोभ, मोह-वासना, सत्ता की भूख लिये
प्रवंचना से जो इन्हें तोड़ेगा
दीवारों से सिर फोड़ेगा
दशानन सा भूलुंठित होगा
दुर्योधन सा खंडित होकर
जानवरों की मौत मरेगा।
सहज चेतना के ये स्वर हैं जिनके
संस्कृति औ साहित्य की पुण्य धरोहर हैं वे
वेद, उपनिषद, पुराण, वाल्मीकि, वेदव्यास
विवेकानन्द, अरविंद, भवभूति, कालिदास
अवसर है यह उनके वंदन का
जागो, मेरे युवा दोस्त
समय गुजर गया क्रन्दन का।

मेरी खिड़की से हल्के-से प्रकाश ने
अंदर की ओर धक्का मारा
लपेट में आ गया भौंरा बेचारा
करना चाहता था तीर्थाटन अंतहीन
मंदिर अंतहीन, मूर्तियां अंतहीन, देवता अंतहीन
लेकिन नून तेल लकड़ी का मारा
बुला रही थी उसे ठोस जमीन
जिस तरह निकला था चुपचाप मुझसे
आकर दुबक गया चुपचाप मुझमें
सवेरा होने को था
मेरा मन सोने को था।

शिल्पी

एकमेव एक ध्येय को समर्पित
अनेकता में एकता को अर्पित
एक ध्वज की, व्यक्ति की नहीं
वन्दना करते लाखों-लाख लोग ।

कहीं पंक्तिबद्ध अनुशासित खड़े
कहीं अपने ईमान पर अड़े
'नर सेवा ही नारायण सेवा'
का साकार रूप धरते
'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'
का वज्रघोष करते
अपने देश की पावन माटी को
अपने उन्नत भालों पर मलते
दफ़्तरों, कारखानों, विधान सभाओं में
कला मंचों, संसद की दीर्घाओं में
शिशु विहारों में, विद्यालयों में
अस्पतालों, कॉलेजों, ग्रन्थालयों में
जंगलों, पहाड़ों, नदी के तीरों में
जनसंकुल शहरों की भीड़ों में
हजारों हजार मीलों के फासलों पर
एकरूपता की मिसाल धरते
'परं वैभवम् नेतुमेतत् स्वराष्ट्रम्'
मंत्र जाप करते दीख पड़ते हैं ?

यदि दीख पड़ते हैं तो वह देश भारत
और केवल भारतवर्ष होगा
और वह मंत्र, केवल संघमंत्र होगा
और उस मंत्र का उद्‌गाता केशव
और केवल डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार होगा।

जिसने देशभक्ति का सबक बचपन में सीखा हो
जिसने कर्म से कैशोर्य को सींचा हो
पराधीन माँ की बेड़ियों का दुःख
जिसका संताप बनकर घुला हो
जिसके संवेदन ने क्रांति का तानाबाना
अपने यौवन के बाहुबल से बुना हो
अपने लिए नहीं, देश के लिए जीना
जिसका प्रौढ़पन रोम-रोम से बोला हो
राजनीति को मोटी खुराक नहीं
औषधि रूप में जिसने घोला हो
अनुभवों के अंबारों के बाद
एक अनुभव बीजमंत्र सा बोला हो
'हिन्दू जगे तो देश जगे'
इस प्रखर मंत्र का उद्‌गाता केशव
और केवल डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार होगा।

सन् उन्नीस सौ पच्चीस
विजयादशमी के दिन
विधि ने शिल्पी को प्रस्तर शिला दी
निर्मिति के उपकरण दिये, औजार दिये

मूर्ति बने असाधारण, अनुपमेय
पर जीने को तव कुल पंदरह साल दिये
लक्ष्य को साध अर्जुन के तीर-सा
इसके क्षण-क्षण वे संघ के लिए जीये
आँखें बंद हुईं तो लोगों ने हैरत से देखा
संघ प्रतिमा साकार थी, संपूर्ण थी।
इस प्रतिमा से भारत माँ का जयघोष उठता था
नागपुर में कश्मीर केरल से गले मिलता था
अग्निशिखा-सा हवा में लहराता पवित्र भगवा ध्वज
जिनके सबल हाथों में थमा था
वे पूरब पश्चिम, उत्तर दक्षिण की भाषा नहीं जानते थे
वे केवल भारत को भारतमाता मानते थे।

प्रतिमा असाधारण थी, अनुपमेय थी
नहीं,
प्रतिमा असाधारण है, अनुपमेय है
शिल्पी कौन कितना बड़ा, कितना महान् होता है
इसका निर्णय केवल और केवल इतिहास देता है
जिस पंक्ति में सबसे आगे केशव खड़े हैं
उसका छोर अब क्षितिज के पार दिखता है
पर,
क्षितिज तो केवल मात्र कल्पना है
उसका न ओर होता है न छोर होता है
क्षितिज को जितना बढ़ाओ उतना बढ़ता है।

महाप्राण : शब्दों से परे

बहुत करीब से देखा था तुम्हें मेरे बचपन में
बहन ने बताया निराला आये हैं, महादेवी भी हैं
वे ही जिनकी कविताएँ मेरी किताब में हैं
याद कर जिन्हें परीक्षा देनी है।

बैठकघर में तुम घिरे बैठे दिखे थे
लोग कुछ तो बोल रहे थे, तुम केवल सुनते थे
किसी ने बताया नहीं, मैं जान गया
ये ही महाप्राण
कद्दावर शरीर उन्नत भाल
झील-सी गहरी आँखें
घिरा होकर भी अकेला, अकेले में विशाल।

फिर विशाल जनसमूह में सुना तुम्हें
मंच पर करते एकल काव्य-पाठ
गुरु गंभीर मेघों-सा गर्जन सिंहनाद
वाणी नहीं अंतर से कोई बोल रहा था
ये ही महाप्राण
किसी पीड़ा को अभिव्यक्ति देती आंखें आर्द्रा
कोई रोषघोष करती वनराज की मुद्रा
शब्द मेरी छोटी समझ से परे थे
समझने की कोशिश को ही धो डाला

उस दिन जितना पाया आज तक संजोया है
सामान्य तो नहीं थे तुम, थे साक्षात् निराला।

परीक्षाओं से इतर अब जब कविता ढूँढ़ी है
शब्दों का अर्थ भी कुछ-कुछ समझ-सा आया है
शब्दातीत अर्थों को भी गले लगाया है
महाप्राण का मतलब खुल पाया है।
वह जो मेरे लिये शरीर से थे महाप्राण
वह जो वाणी मुद्राओं से थे महाप्राण
वे बन गये अनुभूतियों के महाप्राण
अन्तस् के दुःख दर्दों के महाप्राण।

इलाहाबाद की पत्थर तोड़नेवाली के महाप्राण
निरीह से कुकुरमुत्ते के महाप्राण
ठाकुर रामकृष्ण के चैतन्य महाप्राण
स्वयं राम के शक्तिपूजक महाप्राण
राष्ट्र आराधन में लीन महाप्राण
भारत मां के वरद पुत्र हे महाप्राण!
लो प्रणाम! लो प्रणाम! लो प्रणाम!

केसरी

अन्तस् में जब पीड़ा गहराती बनती कवि का गान
लाखों में एक हुआ करता है जिसे मिलती पहचान
नाहर, तुम आये और छाये जन जन के मानस पर
दर्द जीया और पीया तुमने, हमको उसका अभिमान।

देश टूट गया, जल्दी थी कुछ को सत्ता के गलियारों की
बँटे हुए मानव ने मानव को काटा, बन आयी हत्यारों की
भारत माँ के दोनों स्कंध रक्त में सन गये, विलग हो गये
परिवार टूट गये, बिखर गये, घातें थीं बस हथियारों की।

आजादी का जश्न बंटवारे की कालिख में था रीता-रीता
एक सुनहरी सुबह का स्वप्न खत्म हो गया या यूं बीता
अपना घर छोड़ आयी पूरी एक कौम शरणार्थी बन गयी
लेकिन कुर्सी पे जो बैठ गये थे उन्हें लगा जैसे गढ़ जीता।

वरद पुत्र माँ के तुम, पश्चिम बंग की धरती को बचा लिया
गरजे थे तुम, कुचलनेवालों की मनोवृत्ति को ही कुचल दिया
इतिहास हो गये शब्द, 'कुचलना' फिर सुना न गया संसद में
आतुर थे सब सुनने तुमको दिल थामे भारत की संसद में।

घायल हृदयों को मरहम पट्टीकर जोड़ा, ममता दी थी तुमने
वक्त गवाह है, हमने देखा सूखी-रीती आंखों में गहराये सपने
इस देश में हम न होने देंगे दो निशान, दो विधान, दो प्रधान
बलिदानी वीर हे श्यामाप्रसाद मुकर्जी! लो प्रणाम! लो प्रणाम!

त्राहि माम्, हे धरित्री, त्राहि माम् !

माता,
तुम तो प्रकृति माँ हो
दया करो
अपनी संतति पर दया करो
विकराल रूप मत धरो।

वह अबोध अजन्मा शिशु
जो सोया था सुख से माँ के पेट में
वह नन्ही कली जो थी भुज की परेड में
वह किशोर जो देश का भविष्य था
लगा रहा था बालकनी में देश का झंडा
वह जो अभी-अभी मिल की पारी से
थक कर था घर लौटा।
अचानक तुममें रोष व्यापा
तुम्हारा शरीर काँपा
हुए जड़-चेतन सब धराशायी
माता, तुम्हारी ममता हुई परायी
गिनती ही नहीं हो पायी।
हे पालनहारा,
तुम्हें तनिक भी दया नहीं आयी
दया करो, माता,
अपनी संतति पर दया करो
विकराल रूप मत धरो।

और कितना रोष, माता ?
मोरवी को भूले न थे
लातूर से उबरे न थे
उत्तरकाशी का आतंक ताजा
उड़ीसा का तूफान करता
आज भी तकाजा
बंगाल की नदियों की गरज-तरज
विकराल बाढ़ नाची थी लरज-लरज।
माता, ये तेरे गण क्यूं करते मनमानी
गुर्जर भूमि में क्या करने की ठानी ?
माता, ये तेरे सौ करोड़ पुत्र शिव बनकर
तेरे पैरों में लोटते हैं, शांत हो माता,
शांतम्, शांतम्, शांतम्
त्राहि माम्, हे धरित्री, त्राहि माम्
तुम तो धारण करती हो, माता हो
अपनी संतति पर दया करो
विकराल रूप मत धरो ।

(गुजरात का भयानक भूकम्प - २६ जनवरी २००१)

आतंक

(११ सितम्बर २००१)
आज सुबह अमरीका ने उठ कर देखा आसमान को
मौसम भी वैसा ही खुश-खुश, जैसा था कल शाम को
कहीं बादल नहीं, कुहासा नहीं, सब कुछ साफ-साफ
हाथ हिला स्वजनों को, लोग निकल पड़े अपने काम को।

अचानक आकाश में घनघोर कालिमा का आभास हुआ
शोर बादलों के फटने जैसा, जन-जीवन बदहवास हुआ
बाहर अभी जो सुहावना लग रहा था शेली की कविता-सा
वहीं कोयले की खदान का मानों धरती पर उजास हुआ।

अमरीकी अर्थवैभव के प्रतीक न्यूयार्क के जुड़वा टॉवर
पेंटागन का अभेद्य सुरक्षा भवन वाशिंगटन का पॉवर
अनदेखा करते थे अब तक विश्व की वेदना आतंकी साये में
धूलिसात हुए पल ही में अगवा विमानों की टक्कर खाकर।

दीठ लगी थी इन पर एक अर्से से जिहादी हैवानों की
मानवता के दुश्मन, बर्बर, लोलुप, दुष्ट, शैतानों की
धक्के प्रचंड, फ़ौलाद गल गये, निरीह प्राण गये हजारों में
उन्मादी कृत्या बन आये थे, आहुति ले ली इन्सानों की।

अमरीका समझे बैठा था आतंकवाद सिर्फ एक जुमला है
उसका क्या लेना देना, चाहे भूमंडल पर जिहादी हल्ला है
मुंबई ने भुगता इसको, हमने भारतभर में इसको झेला है
कश्मीर में रचते खूनी होली, रोज-ब-रोज का यह खेला है।

मासूमों को भी जो न बख्शे, कैसी यह जुनूनी कौम है
बामियान को भी न छोड़ा, जहां बुद्ध की प्रतिमा मौन है
बच्चों पर बर्छी भाँजते, मुशर्रफ कहते आजादी का जंग है
विश्व अपने हृदय से पूछे, ओसामा बिन लादेन कौन है।

सफेद कबूतर उड़ाना छोड़ो, चेतो, अपनी अस्मिता पर दाँव है
बातों से जो हल न निकला, तो फिर अंगद का पाँव है
महावीर की भुजायें फड़कें, रावणों के शीश धरा पर लुढ़कें
यही समय है टैंक चढ़ा दो, जहां आतंकियों के ठाँव हैं।

मनु का पुनर्जन्म

बड़े शहर के बीचोंबीच
सुबह दस से रात बारह तक
लगातार भीड़भाड़ कोलाहल में डूबे
एक सिनेमाहॉल का पड़ोसी है मेरा घर।

निश्चित है लाइनें लगती हैं
हल्ला होता है
कभी-कभी मारपीट होती है
रोज देखता हूं
नहीं, देखना पड़ता है
मन में कौंच उठती है
क्या मनु का पुनर्जन्म इसीलिए होता है
हिमालय के शिखरों से उतर
गाली खाये, धक्के खाये, भीड़ बढ़ाये ।

सिनेमाहॉल है तो होटलें तो होंगी ही
बहुत-सी हैं आसपास
अनवरत अबाध गति से
सुबह से रात तक
विविध भारती, रेडिओ सिलोन, ग्रामोफोन
अपनी प्रखर वाणी

पारसी नाटक के खलनायक की आवाज-सी तेज
अपने ग्राहकों को लुभाती हैं
रोज सुनता हूँ
नहीं, सुनना पड़ता है
मन में कौंच उठती है
क्या मनु का पुनर्जन्म इसीलिए होता है
श्रद्धा का आवास त्याग
मारा-मारा फिरे
बासी रोटी खाये
फुटपाथ पर पड़ा-पड़ा
बीमार हो मर जाये।

गंगा का अर्घ्य सिन्धु को

भाल पर विराजती सिन्धु को करते समर्पण।
पुण्यसलिला गंगा माँ का अतुल नेह अर्पण।।

नटराज को जन जन का नमन स्वीकार हो
गिरिराज को यह स्वर वंदन स्वीकार हो
शैलसुता मस्तक पे अक्षत चन्दन का टीका
सूर्य का आलोक सृष्टि का आधार हो।।
सिन्धु तट पर पूर्वजों को नत शीश तर्पण।।

प्रकृति मां का बिखरा खजाना ऊँचे लेह में
तृप्त होते नयन, रोमांच भरता देह में
लायें हैं हम स्नेह छल-छल जल - मंजूषा
गंगोपसागर का अर्घ्य तुम्हारे गेह में।।
गरज-तरज कर बहती हो तुम करती नर्तन।।

भगीरथ यत्नों से पायी महादेव से गंगा-धारा
मानसरोवर ने दिया सहज ही सिन्धु कूल-किनारा
धवल धरती, धवल धारा, हरितिमा श्रृंगार प्यारा
चहुँ दिशाएँ मुदित होतीं गाता विहँसता देश सारा।।
ताप बन रवि सोख लेता, फिर जलज बन वर्षण।।

भाल पर विराजती सिन्धु को करते समर्पण।
पुण्यसलिला गंगा माँ का अतुल नेह अर्पण।।

('सिन्धु दर्शन' आयोजन के अवसर पर लेह में प्रस्तुत गीति-नाटिका से)

सिन्धु, ए देशेर प्राण

प्यार है मुझे मेरे इस देश से
केरल असम कश्मीर से ।।

माँ काली का श्रृंगार कर रक्त सिंदूर से
रोली मोली अक्षत धूप दीप लाल फूल से
एनेछि आमरा कोलकाता सुदूर पूर्वो थेके
मायेर प्रसाद चरनामृत पेड़ा आर संदेश
लाये हैं हम कोलकाता दूर पूरब से
प्रसाद माँ का चरणामृत पेड़ा और संदेश
सहज संदेश कि हम एक हैं, आमरा एक, हम एक हैं
एक आमादेर देश, एक संस्कृति, मायेर पुत्र आमरा अनेक
देश हमारा एक, संस्कृति एक, माँ के पुत्र हम अनेक
तोमार तीरेई जन्मे बड़ो हयेछे गुनीजन ऋषि मुनि वेद बेदांतेर ज्ञान
सभ्यता का जन्म उत्कर्ष तुम्हारे तट पर
ऋचाएं वेद की पुराण वेदांत का ज्ञान
शस्त्र और शास्त्र की सम्यक् पहचान
रीति और नीति का सहज अभिमान
रक्खक पच्छिम दिशाते तुमि
तुमिई सिन्धु, ए देशेर प्राण, तुमिई त्राण
नगाधिपति हिमालयेर कन्या
रक्षक बन तुम खड़ी रहीं प्राणरक्षक त्राणस्वरूपा
नगराज हिमालय की पुत्री
धर्म में अडिग लामाओं की प्राचीर बन

बोधिसत्व का पथ दिखलाया शील का मार्ग जिन्होंने
इस धरती पर पैदा होते मेहनतकश इंसान सजीले
भारतमाता की ओ पावन माटी
भारत मायेर ओ पवित्र माटी
तोमारे करी प्रोनाम
लहो आमादेर सकलेर प्रोनाम
ठाकुर रामकृष्ण, विवेकानन्द, अरविन्द ओ नेताजीर आह्वान
ऋषि बंकिम, कविगुरु, माइकेल, नजरुल उच्चारित गान
दिशा-दिशान्तरे गुंजरित हबे बारेबार
भारत देश आमार, आमरा देश के भालो बासी
चारि दिशाते रयेछे आमादेर एई भारतवासी ।।

प्यार है मुझे मेरे इस देश से
केरल असम कश्मीर से
जम्मू लद्दाख कश्मीर से ।।

('सिन्धु दर्शन' आयोजन के अवसर पर लेह में प्रस्तुत
गीति-नाटिका से हिन्दी-बांग्ला का संयुक्त गीत)

फौजी बहन !

सीमा पर तैनात फौजी बहन !
जय श्रीराम !
हमने भी पढ़ी तुम्हारी लिखी पाती
पिता के नाम
हमारा हौसला बढ़ा गई
हिम्मत फिर से आ गई।
गर्व है तुम पर, तुम्हारी 'मर्दानगी' पर
खतरों से जूझती तुम्हारी रवानगी पर।
तुमने जगाया है विश्वास
और दिया है आश्वास
भेडियों से घिरे इस देश का
बाल न बाँका होगा
बधाई देना उसको
जिसने झपटते शेर का चित्र
तुम्हारे ध्वज पर आँका होगा ।

निहारता है देश उस ओर जहाँ से
गर्म हवाएँ यहाँ दाखिल होती हैं
बर्फीली चट्टानों पर तुम्हारे पसीनों की
उफनती नदियाँ बहती हैं।

जितने युद्ध हुए तुमने शोणित बहाया है
जीते हुए समर को नेताओं ने गंवाया है
इतिहास किसी की मुँह देखी नहीं कहता
चूक गये ये चौहान
एक नहीं बार-बार
वरना देश का नक्शा कुछ और ही होता।
अस्मिता की लाज मेरे फौजी ने रखी है
कुर्सिया गये नेता ने क्षण भर में खो दी है।

फौजी बहन !
दुःख होता है कहते
काश, तुम इजरायली फौज में होती
मन में जो तुम्हारे है, हमारे है
उसे आखिरी अंजाम तो देती।
'बीस' की सूची सौंप दी, अब चैन से सोते हैं
चुनाव लड़ते हैं, अपने अनदेखे वोटों को रोते हैं
पाँच चढ़ आये थे संसद पर खामख्याली पालते
इनमें दम-ख़म था तो बदले में
पचास हजार को सीमा पार भून डालते
अब तो हर जगह हम ही भूने जाते हैं
ऊपर से देशी पाकी भोंपू
'सियार-सियार' चिल्लाते हैं।
बंद होगा यह सिलसिला उस दिन

फौजी बहन !
तुम्हारी तोपें गरजेंगी
बिजली बन दुश्मन पर बरसेंगी
'जय शिवा, जय प्रताप' का उद्घोष
पहाड़ों पर गूंजेगा
प्रतिध्वनित हो मैदानों में
भारत माँ का मस्तक
फिर से ऊँचा होगा।

रामसेतु तोड़ने नहीं देंगे

नल, नील, अंगद, हनुमान, जामवंत सब वहाँ थे
सागर तीरे इस पार, जाना था उस पार
माता सीता बंदिनी थीं रावण की लंका में
हहराता सागर बीच में, लगता था दुश्वार ।

अत्याचारों का इतिहास रचा था दुष्ट रावण ने
चिंतित थे सब, छटपटाते थे, करना था प्रतिकार
दशानन का शीश काट रचना था इतिहास
इसीलिये तो लिया था विष्णु ने रामरूप अवतार ।

रामकृपा से विश्वकर्मा-पुत्र नल ने साहस किया
पर्वत के पत्थर तैरें पानी पर, हो सेतु तैयार
सदल बल राम की सेना करे कूच इस पर होकर
बाँछें खिल गयी सबकी, किया जोर से जय-जयकार।

तट पर परमेश्वर रामेश्वर की पूजा की राम ने, लक्ष्मण ने
रज को माथे से लगाया सभी ने, पाया सुख अपार
फिर क्या, एक-एक ने रामनाम लिखा और पत्थर तैराये
देखते-देखते तीस मील का रामसेतु हुआ ऐसे तैयार ।

उछलती - कूदती वानर सेना पहुँच गयी उस पार
जिस सेना के नायक हों राम, गूँजती हो धनुष की टंकार
उसे रोक सका है क्या कोई, हर दिन है बस जैसे त्यौंहार
विजय ही विजय है रामायण का कथन, अशेष, अदभुत्, अपार।

लाखों बरस बीत गये, रामसेतु धनुष्कोडि पर अविचल खड़ा है
धरती की चक्रावातों, सुनामी से रक्षा करता, थोरियम का भंडार
मछुआरों का जीवन रक्षक, संस्कृति का प्रतिमान, आस्था का आगार
राष्ट्र और सभ्यता के विरुद्ध क्यों षड्यन्त्रों में उलझी ये सरकार।

नासा ने चित्र लिये उपग्रह से, जान गया विश्व रामसेतु का सच
पर रामद्रोही बैठे हैं सिरमौर बन जिस देश में, वहां कैसा झूठ कैसा सच
योजना बनी आनन-फानन में रामसेतु तोड़ा, जाये निकाली जाये खाल
रामसेतु तोड़ने आये दो जहाज स्वयं ही टूट गये, हनुमान ने दिया दुत्कार।

मानवता के विरुद्ध अपराध है हमारी मान्यताओं पर चोटें करना, सँभल जाओ
रामसेतु हमारी आस्थाओं का सेतु है, राम और कृष्ण हमारी संस्कृति के आधार
घर को आग लगाने से बचाओ, सुबुद्धि हो लौट आओ, ये हैं ज्वाला के अंगार
हमें कसम शहीदों की, रामसेतु तोड़ने नहीं देंगे, भले हो लड़ाई आर - पार।

सन् १८५७ से १९४७ और नई पीढ़ी

अमर क्रान्ति के प्रतीक रोटी और कमल
याद हैं तुमको या भूल गये
पहुँचाया जिन्हें स्वराज दीवाने साधुओं ने
देश के इस छोर से उस छोर।

बैरकपुर का गाय-सूअर की चर्बीवाला कारतूस
याद है तुमको या भूल गये
बलिदान जिसे मंजूर उस वीर सिपाही
मंगल पांडे की छावनी की वह भोर।

दस मई सन् सत्तावन मेरठ की जंगे आजादी की
वह आग याद है तुमको या भूल गये
फैली जिसकी लौ, आजाद रही दिल्ली चार महीने,
सुना है कभी उसका शोर।

रण में चण्डी बन शत्रु को धूल चटाती वह बाला
याद है तुमको या भूल गये
बुंदेलोंवाली उस झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई का शौर्य,
फिरंगियों से युद्ध घनघोर।

देशभक्ति का पाठ पढ़ाते बिठूरवाले नाना पेशवा
याद है तुमको या भूल गये
गंगा किनारे जिनका महल बना था
फिरंगियों का काल, क्रान्ति की बागडोर।

बेहद फुर्तीले देशदीवाने तात्या टोपे के करतब
याद हैं तुमको या भूल गये
लोहा लिया जिन्होंने हत्यारे अंगरेजों का
अंत तक गली-गली और ठौर-ठौर

वे बहादुर अजीमुल्ला खां, कुंवर सिंह, हजरत महल
याद हैं तुमको या भूल गये
देश का झंडा उठाये क्रान्ति के सैनिक
युद्ध लड़े स्वयं जिन्होंने, वे हमारे सिरमौर

कोल्हू में जिनको जोता गया वे क्रान्तिवीर
कालापानी के याद हैं तुमको या भूल गये
स्वदेश-स्वधर्म की याद दिलाते दो जीवन के कैदी
वीर सावरकर की यातनाएं कठोर

मदनलाल धींगरा, भगत सिंह, आजाद, चाफेकर बंधु
याद हैं तुमको या भूल गये
शहीदों की वह पौध जो आतुर थी नृशंष फिरंगी को
मार भगाने बाजुओं में लिए जोर

'तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूंगा' का उद्घोष
याद है तुमको या भूल गये
विदेशों की खाक छानते नेताजी के हिये में
उठती हूक और आजादी की हिलोर

अट्ठारह सौ सत्तावन के स्वातन्त्र्य
समर को डेढ सौ वर्ष हुए
उन्नीस सौ सैंतालीस तक अस्सी
लाख से अधिक शहीद हुए
दो करोड़ से अधिक फिरंगियों की
क्रूरता के हत्थे चढ़ गये
गाँव के गाँव जलाये गये,
छकड़े भर-भर पेड़ों से लटकाये गये
तोपों से उड़ाये गये वे ही थे
जो अपने ईमान पर अड़ गये
जो संगीनों की नोक पर
अधर्म को अस्वीकार कर गये
संस्कृति की रक्षा में झुके नहीं
फाँसी के फंदे पर झूल गये
अमूल्य आजादी की बड़ी कीमत
याद है तुमको या भूल गये?
खुले आम रंगरेलियां और मस्ती
अपना आपा ही क्या तुम खो बैठे?
स्वधर्म और अपने स्व का समर
संस्कृति के युद्ध को तुम भूल गये?

सन् अट्ठारह सौ सत्तावन को बहुत दिन
तो नहीं हुए फिर तुम कैसे भूल गये
अपने पैरों की धरती को ही भूल गये
रोटी और कमल को ही तुम भूल गये?

विमल लाठ

जन्म : सन् १९४२

शिक्षा : एम कॉम, एल एल बी, एडवोकेट

सांस्कृतिक गतिविधियाँ : रंगकर्म में सन् १९५५ से सम्बद्ध प्रमुखतया हिन्दी नाटकों का निर्देश अभिनय-लेखन। नाट्योत्सवों त कार्यशालाओं का संयोजन। विशे कविता मंचन, कहानी मंचन त सांगीतिक प्रयोग। 'नाट्यवार्ता' पत्रि का संपादन। प्रमुख नाट्य संस 'अनामिका' के वर्तमान अध्यक्ष। क समारोहों, काव्य-समारोहों का संयोजन संचालन, बांग्ला नाटकों में सक्रियता।

साहित्य : देश की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में कवि लेख आदि प्रकाशित। पुस्तकों में आलेख

प्रकाशन : 'साकार होता सपना' (नाटक नाट्यशास्त्र की प्रासंगिकता (संपादन 'फिर से बनी अयोध्या योद्धा' (संपादन अनेक प्रासंगिक स्मारिकाएँ।

सम्मान : उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी बी. एम. शाह सम्मान।

मध्य प्रदेश सरकार का राष्ट्रीय कालिद सम्मान।

अन्य : भारत सरकार तथा अन्य प्रदेश सरक की समितियों में विशिष्ट सलाहकार।